# वेदों में पर्यावरणीय शिक्षा

*डॉ. नीतेश कुमारी

वेद सर्वज्ञानमय हैं। यह वह पवित्रतम ज्ञान राशि हैं, जिससे ईश्ट प्राप्ति और अनिश्ट निवारण होता है। 'इश्ट प्राख्यानिश्टपरिहार योरलौकिकमुपायं यो ग्रन्थः वेदयति स वेदः।' वेद समस्त ज्ञान विज्ञान का अक्षय कोश हैं। भारतीय मनीशियों ने आदिकाल से ही पर्यावरण को विशेश महत्तव दिया है। वेदों में जल, वायु भूमि, मेघ, वन, वनस्पतियों आदि की देवी देवताओं के रूप मे स्थिति तथा सदैव इनकी सेवा करने की कामना की गयी है। प्राकृतिक पर्यावरण के साथ ही वेदों में सामाजिक तथा सांस्कृतिक पर्यावरण के शुद्धिकरण विशयक विचार प्राप्त होते हैं।

पर्यावरण शब्द परि तथा आड्ग उपसर्ग पूर्वक वृड्ग धातु से निश्पन्न हुआ है। पर्यावरण का अर्थ है परितः आवृणोति आच्छादयति यत् तत् पर्यावरणम् अर्थात् जीव को चारों ओर से घेरने वाला आवरण पर्यावरण है। पर्यावरण का तात्पर्य केवल प्राकृतिक घटकों से ही नही है। अपितु पर्यावरण का तात्पर्य हमारे चारों ओर के आवरण एवं परिवेश से है। हम घिरे रहते हैं जो प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से हमें प्रभावित करता है। इस प्रकार समग्र मानव प्राणी एवं चराचर जगत पंचमहाभूत (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश) वन, वृक्ष, नदी, पहाड, समुद्र, एवं पशु पक्षी से आवृत्त है।

मानवीय सभ्यता एवं विकास यात्रा में पर्यावरण की दृश्टि से वेदों का स्थान अक्षुण्ण रहा है। वैदिक सूक्तों में पर्यावरण के संरक्षक व पोशक समस्त प्राकृतिक तत्वों को साक्षात् देवता मानकर उनकी स्तुति की है।

वैदिक ऋशि प्रकृति को सचेतन मानते थे। वेदो में परम पुरूश परमेश्वर को सृश्टि का उत्पादक देवता माना है तथा सूर्य, प्थ्वी, नदी, वायु, वेग, वनस्पति आदि प्राकृतिक घटकों की देवी– देवताओं के रूप में स्तुति की गयी है। वेद पर्यावरण संरक्षण हेतु जल, वायु, तथा औशधियों के संरक्षण का निर्देश देते हैं।

**त्रीणि छन्दांसि कवयो वि येतिरे पुरू रूपं दर्शतं विश्वस्यरक्षणम् ।**

**आपो वाता औशधयः तान्येकस्मिन भुवन अर्पितानि ।।**

अथर्ववेद के अनुसार भूमि चट्टान, पत्थर और मिट्टि है–

**'शिला भूमिर मा पांसुः सा भूमि संघृतः धृताः।**

भूमि न केवल खनिज संपदाओं को धारण करती है अपितु अन्न आदि वनस्पतिओं को उत्पन्न कर प्राणियों को जीवन प्रदान भी करती है। अथर्ववेद में पृथ्वी को माता कहा जाता है– माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः' तथा सदैव मातृभूमि की परिचर्या करते रहने की कामना की गयी है।

वेदों में प्रकृति को माता के महनीय पद से अलंकृत किया है और इसके घटक पंचतत्वों तथा वृक्ष वनस्पतिओं को देवतुल्य मानकर अभ्यर्थना की गयी है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का प्रादुर्भाव प्रकृति से हुआ है। वेदों में ऋशि मुनियों, दार्शनिक संतो तथा मनस्वियों ने लोकमंगल के लिए चिन्तन मनन किया। वेद, वेदांग,

उपनिशदों आदि की रचना प्रकृति की गोद में हुई है। प्रकृति के सान्निघ्य अर्थात अरण्य में लिखे जाने के कारण ग्रन्थ विशेश आरण्यक कहलाए। प्रकृति के विविध स्वरूप के आधार पर वृक्षायुर्वेद की रचना की गयी। जिसका मूल सिद्धान्त था आधिदैविक जीवन के महत्व को समझते हुए आधिभौतिक जीवन यापन हेतु प्रकृति का भाास्त्रीय विधि से उपभोग करना । इसलिए ही नवीन कार्य करने से पूर्व वेदों में निर्देश है कि किसी भी कार्य को करने से पूर्व वृक्षों का अर्चन किया जाए–

**अश्वत्थो वट वृक्ष चन्दन तरूर्मन्दार कल्पद्रुमौ।**
**जम्बू निम्ब कदम्ब आम सरला वृक्षाश्चते क्षीरिणः।**
**सर्वे ते फल संयुतः प्रतिदिनं व्रिभ्राजनं राजते**
**रम्यं चेत्ररधं च नन्दनवनं कुर्वन्तु नो मंगलम्।।**

भारतीय वैदिक साहित्य में प्रकृति की महिमा का जो उल्लेख प्राप्त है वैसा अन्यत्र कहीं प्राप्त नहीं होता। सदियों से ही ऋशियों ने प्रकृति में देवत्व एवं दिव्यत्व का एहसास किया है। ऋग्वेद के पृथ्वी सूक्त में आकाश को पिता एवं धरती को माता मानकर उससे अन्न और यश देने की कामना की गयी है। मानवीय सभ्यता की विकास यात्रा में पर्यावरण संरक्षण की दृश्टि से वेदों का स्थान अक्षुण्ण रहा है। वैदिक सूक्तों में पर्यावरण के संरक्षक व पोशक समस्त प्राकृतिक तत्वों को साक्षात् देवता मानकर उनकी स्तुति की है।

जब हम वैज्ञानिक दृश्टि से ऐसे वैदिक सूक्तों एवं मन्त्रों का चिन्तन और विश्लेशण करते है तो हमें पर्यावरण से सम्बन्धित अनेक रहस्यों की उपलब्धि होती है। ऋग्वेद में ऋशि ने कहा है कि संपूर्ण जैव मण्डल का नियमन एवं सम्मान ही इसकी सुरक्षा एवं संरक्षण है– ' नियद्यामाय वो गिरिर्नि सिन्धवों विधर्मणे

महेशुश्माय येमिरे।' वहीं यजुर्वेद में कहा हैं –'अंतरिक्षी मा हिंसी 'अथर्ववेद के अनुसार' यस्या हृदयं परमे व्योमन्'

जिस प्रकार ह्रदय की धडकन पर प्राणी का जीवन निर्भर है उसी प्रकार अंतरिक्ष की सुरक्षा में ही पृथ्वी और पर्यावरण की सुरक्षा है। अंतरिक्ष रूपी हृदय के नश्ट होते ही समस्त ब्रह्माण्ड का विनाश सुनिश्चत है। इस प्रकार पर्यावरण का कोई ऐसा पक्ष नही हैं जिसे वेदों में वर्णित न किया गया हो।

वायु मानव प्राण का आधार है। इसलिए जीवन रक्षण के लिए वायु प्रदूषण के समस्त तत्वों का नियन्त्रण आवश्यक है। अथर्ववेद में 'आपो वाता औषधयः' कहकर पर्यावरण की रक्षा के लिए आवश्यक है। वायु के महत्व के विषय में कहा है कि वायु में दो गुण हैं– प्राण वायु के द्वारा मनुष्य की जीवन शक्ति का संचार करना, अपान वायु द्वारा सभी दोषों को शरीर से बाहर निकालना। इसलिए वायु को विश्वभेषज कहा है, क्योंकि यह देह के समस्त रोगों को नष्ट करने वाला ळें

**आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रपः।**
**त्वं हि विश्व भेषज देवानां दूत इयसे।।**[1]

ऋग्वेद में कहा है कि हे वायु तुम्हारे पास अमृत का खजाना है, तुम ही जीवनशक्ति के दाता हो, तुम ही संसार के पिता, मित्र और भाई हो। तुम समस्त रोगों की औषधि हो।

**यददो वात ते गृहे अमृतस्य निधिर्हित।**

**तेन नो देहि जीवसे ।**[2]

ऋग्वेद में वायु प्रदूषण को रोकने के लिए कहा है कि वायु में अमृत अर्थात् आक्सीजन (OXYGEN) है, उसे नष्ट न होने दें। अर्थात् ऐसा कोई कार्य न करें जिससे वायु में आक्सीजन की कमी हो।

**नू चिन्नू वायोरमृतं वि दस्येत।**[3]

ऋग्वेद के मंत्र में कहा गया है कि परमात्मा द्वारा मनुष्य को दिए गये उपहारों में से एक पृथ्वी है। इस पृथ्वी में अक्षय धन का भंडार है। इस अक्षय भंडार की रक्षा द्युलोक, वृक्ष–वनस्पतियाँ, जल, नदियाँ वन और जल के स्रोत करते हैं। इसका अभिप्राय है कि पृथ्वी के अन्दर जो रत्न, मणि, खनिज, पेट्रोल, कोयला, तेल आदि पदार्थ हैं, उनकी सुरक्षा के लिए ये वृक्ष–वनस्पतियों आदि पदार्थ हैं। यदि हम पृथ्वी के रक्षक तत्वों को नष्ट करते हैं तो भूमि के अन्दर विद्यमान खनिजों आदि पर दुष्प्रभाव पडेगा।

**पूर्वीरस्य निषिधो मर्त्येषु**
**पुरू वसूनि पृथ्वी विभर्ति।**
**इन्द्राय द्याव औषधिरूतापो**
**रयिं रक्षन्ति जीरयो वनानि।**[1]

ऋग्वेद और अथर्ववेद में भूमि के चारों ओर स्थित ओजोन परत का उल्लेख है। ऋग्वेद में ओजोन की परत को स्थविर परत कहा है। अथर्ववेद में पृथ्वी को गर्भस्थ शिशु मानते हुए उसकी रक्षा के लिए प्रार्थना की है।

**महत् तदुल्बं स्थविरं तदासीद।**
**येनाविष्टितः प्रविवेशिथापः।**[2]
**तस्योत जायमानस्य उल्ब आसीद् हिरण्यय।**[3]

ओजोन परत सूर्य से निकलने वाली लघु पराबैंगनी किरणों का अवशोषण कर लेती है, और पृथ्वी के पेड़ पौधों तथा जीव–जन्तुओं को भस्म होने से बचाती है।

अथर्ववेद में पर्यावरण के महत्तव का प्रतिपादन करते हुए कहा है–

**सर्वो वै तत्र जीवति गौरश्वः पुरूषः पशुः।**

**यत्रेदं ब्रह्मा क्रियते परिधिर्जीवनाय कम्।।**[4]

जहाँ पर्यावरण शुद्व रहता है, वहाँ मनुष्य, पक्षी–पशु आदि सभी सूख पूर्वक जीवित रहते है। मंत्र में पर्यावरण के लिए परिधि शब्द और पूर्ण शुद्धि कि लिए ब्रह्मा शब्द है।

वेदों में वर्णित यज्ञ संस्था पूर्ण रूपेण पर्यावरण संरक्षक थी जिसमें ऋतुओं के अनुकुल योग की व्यवस्थाऐं थी। वैदिक ऋषियों के द्वारा ऋतुओ का पर्यवेक्षण और वृष्टि आदि का अनुमान ऋचाओं में वर्णित किया था। मरूद्गण वृष्टि के प्रेरक है यह अवधारणा मानसूनी हवाओं के विज्ञान की पूर्वज है। पर्यावरण चेतना का ज्ञान वरामिहिर आदि आचार्यों का था। इन आचार्यों ने अपने संहिता ग्रन्थों में विभिन्न भाकुनों व अनुमानों आदि के अध्ययन द्वारा प्रमाणित किया है। यदि भामी वृक्ष किसी भूखंड में मिले तो वहाँ भूगर्भीय जल का अनुमान लग जाता है, यदि किसी स्थान पर अनवरत पक्षी मंडराते है या पक्षी निवास करना भाुरू कर दे तो यह अनुमान स्वभावतः लग जाता है कि वहाँ निश्चित रूप से जलाशय होगा।

स्वास्तिवाचन में भान्ति पाठ में और पुण्याहवाचन में जो मंत्र बोले जाते है उनमें यह निहित है कि पर्यावरण में स्वास्थय और भान्ति होना ही मानव कल्याण का पर्याय है। वैदिक मंत्रों का सर्वाधिक जन–जन में लोकप्रिय भान्ति पाठ मंत्र आका ा अन्तरिक्ष, जल, पृथिवी, फसलें, वनस्पतियाँ, खगोल, इलेक्ट्रोन या अभौतिक तरंगे सब में भांति की भाुभा ंसा करता है।

**शान्ता द्यौ भान्ता पृथिवी भान्तमदमूर्वन्तरिक्षम्।**
**शान्ता उदन्वतीरापः भान्ता नः सन्त्वोशधीः।**
**शान्तानि पूर्वरूपाणि भान्तं नो अस्तु कृताकृतम्।**
**शान्तं भूतं च भव्यं च सर्वमेव भामस्तु नः।।**

आज प्रकृति की गोद मे पलने वाले जीव जन्तुओं के पारस्परिक संतुलन के विनाश ने सारे वि व को सोचने के लिए मजबूर कर रखा है। सभी धरा के संतुलन के लिए चिंतित है। वेदों में प्राकृतिक जीव जन्तुओं को विश्व का आधार माना जाता था। प्रत्येक देवी–देवता के साथ स्थलचर या जलचर जीवों का जुडाव रहता था। ब्रम्हा के हाथ में समुद्र से उत्पन्न भांख का या जल से उत्पन्न कमल का रहना इस पर्यावरण सन्तुलन का प्रतीक है। तुलसी को विश्णु की पत्नी, पीपल को विश्णु का आवास, वट वृक्ष में शिव का स्वरूप, उदूम्बर या गूलर में ब्रम्हा का स्वरूप, बिल्ब की शिवप्रियता, अ ोक का मंगलकारक, दूर्वा को कल्याणकारी मानना इन सभी धार्मिक मान्यताओं ने पर्यावरण चेतना प्रत्येक मानव हृदय में बद्धमूल कर दिया।

**आकाश, पृथ्वी, भूतजगत समुद्र, चन्द्रमा और वायुमण्डल यह सब**
**उसके अवोश है। वेदों में यह अवधारणा है कि**
**उच्छिश्टे द्यावापृथिवी वि वं भूतं समाहितम्।**
**समुद्र उच्छिश्टे चन्द्रमा वात आहितः।।**

वेदों में सृश्टि की संरचना के विशय में पूर्ण विवरण मिलता है। वेदों का मानना है कि पशु जगत पक्षि जगत और प्राणिजगत सब मिलकर पर्यावरण बनाते है और मानव उसका एक अंग है। सब मिलकर पर्यावरण बनाते है और मानव उसका एक अंग है।

अथर्ववेद में कहा है भोजन और स्वास्थ्य देने वाली सभी वनस्पतियां इस भूमि पर ही उत्पन्न होती हैं। पृथ्वी ही सभी वनस्पतियों की माता और मेघ पिता है, क्योकि वर्शा के रूप में पानी बहाकर यह पृथ्वी मे गर्भाधान करता है। वेदों में इसी तरह पर्यावरण का स्वरूप तथा स्थिति बतायी गयी है साथ ही यह भी बताया गया है कि प्रकृति एवं मानव दोनों अन्योन्याश्रित हैं। वैदिक संस्कृति का प्रतिपाद्य विशय धर्म एवं आस्था न होकर वैज्ञानिकता भी है।

यजुर्वेद के शिवसंकल्प सूक्त में प्राकृतिक, सामाजिक, आध्यात्मिक, मानसिक और वैचारिक स्वस्थ पर्यावरण निर्मित करने के लिए उद्घोशणा की गयी है। 'तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु' ऋशि की इस उद्घोशणा से हम राश्ट्रीय अथवा वैश्विक स्वास्थ्य को कल्यायणमय व प्रदूशण रहित बना सकते हैं।

वेदों में कहा है कि यज्ञ ही वह विधि है जिसके द्धारा प्राकृतिक सन्तुलन बनाया जा सकता है। भातपय ब्राम्हाण में यज्ञ को प्रजापति की संज्ञा दी गयी है ' प्रजापति वै यज्ञः' श्रुतियों में यज्ञ को श्रेश्ठतम कर्म कहा गया है– यज्ञो वै श्रेश्ठतम कर्म। 'यज्ञ से पर्यावरण संरक्षण, वायुमण्डल क्षरण, प्रदूशण की रोकथाम, भारीरिक

रोगों से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है।

यज्ञ से वायुमंडल में ऑक्सीजन (O2) और कार्बन डाई ऑक्साइड (co2) का सन्तुल बना रहता है। इसलिए यज्ञ को वैज्ञानिक प्रक्रिया कहा जाता है।

ऋग्वेद में कहा है–

**यत् पुरूशेण हविशा देवा यज्ञमतन्वत।**[1]

यजुर्वेद में कहा है कि यज्ञ सृश्टिचक्र का केन्द्र ; छनबसमनेद्ध है।

**अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।**[2]

आज ग्लोबल वार्मिग के कारण मौसम चक्र असंतुलित हो रहा है। वर्शा के आभाव में भू जल स्तर नीचे जा रहा है। वेदों में हजारों वर्ष पूर्व ऋशियों के द्वारा कहा गया है कि यज्ञ द्वारा वृश्टि होती

है–

**'भूमिं पर्जन्या जिन्वन्ति, दिवं जिन्वन्त्यग्नय।**[3]

यजुर्वेद में वर्णन किया गया है कि यज्ञ से पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक सभी के प्रदूशण दूर होते हैं। छान्दोग्य उपनिशद् में यज्ञ को पर्यावरण प्रदूशण के निराकरण का सर्वोत्तम साधन बताया गया है।

**एश ह वै यज्ञो योऽयं पवते,**
**इदं सर्व पुनाति, तस्मादेश एव यज्ञः।**[4]

यज्ञ पर्यावरण को सन्तुलित करता हैं। प्रदूशण को खत्म करता है। भौतिकतावादी संस्कृति के पोशक मानव ने अपनी विलासिता तथा लाभवृत्ति के कारण प्राकृतिक पर्यावरण के संतुलन को कायम रखा। उन्होने पर्यावरण के लिए भांाति, स्तोत्रों का स्तवन किया।

पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए वैदिक ऋशियों ने जिस मार्ग का अन्वेशण किया, उसकी महत्ता आज भी उतनी ही है जितनी तब थी । ध्वंस के द्वारा प्रकृति अपना संतुलन स्वयं स्थापित करे इससे बेहतर यह है कि हम प्राकृतिक नियमों का पालन कर उसे ध्वंस की ओर नहीं अपितु सृजन की ओर उन्मुख करें। प्रकृति प्रेम वेदों की वह शिक्षा है जिसे अपना कर मानव विशाक्त हो चुके पर्यावरण को अमृतमय बना सकते है। ऋग्वेद में कहा है–

**ऊँ पूर्णाभिद पूर्णामिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।**
**पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावाशिश्यते।।**
**और**
**ऊँ.द्यौ शान्तिः अन्तरिक्षम्वं शांतिः पृथिवी भांाति। औशधयः शांति**
**वनस्पतयः शांति विश्वदेवाशान्तिः शान्ति एव शान्तिः सा मा**
**शान्ति एधि।।**

जो अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी एवं वायु से आच्छादित है तथा जो औशधियों तथा वनस्पतियों में भी विद्यमान है, उस पर्यावरण देव को हम नमस्कार करते हैं।

**यो देवोद्रग्नौ, योदुप्सु, यो विश्व भवनमाविवेश**
**यो औशधिक्ष यो वनस्पतिशु तस्मो देवाय नमो नमः।**

वस्तुतः प्रकृति न केवल हमें जीवन प्रदान करती है अपितु हमारी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विभिन्न साधनों को भी उपलब्ध कराती है।

निश्कर्शतः यह कहा जा सकता है कि प्रकृति का सम्मान एवं पूजन, अर्चन, वदंन, संरक्षण के पीछे पर्यावरण को सुरक्षित रखना ही मुख्य उद्देश्य था। वर्तमान में प्रकृति और पर्यावरण को बचाने व संरक्षण के लिए मानव को प्रकृति से पुनः भावात्मक संबंध बनाने होगें। इसके साथ ही भारतीय वैदिक कालीन संस्कृति की प्राचीन मान्यताओं को सामाजिक परिप्रेक्ष्य की कसौटी पर कसकर फिर से हमें **'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'** का उद्घोश करना होगा। संस्कृति संवेदना से पनपती है जब तक हमारे हृदय स्थल में प्रकृति के प्रति गहरी संवेदना संप्रेशित नहीं होगी तब तक पर्यावरण का दोहन अनवरत होता रहेगा वैदिक कालीन पर्यावरण हमारे समक्ष एक ऐसे राश्ट्र की राह प्रशस्त करता है, जिसका पर्यावरण पूर्णतः समृद्ध, उत्कृश्ट, कल्याणकारी एवं समस्त विश्व के लिए आदर्श स्वरूप हो तथा जहाँ सभी ज्ञान के निर्मल प्रकाश से आलोकित रहें। ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना का प्रतिपालन करते हुए वेदों के मूल मंत्र–

**सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयः**

**सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।**

की आज के पर्यावरण संरक्षण की इस विराट अवधारणा की सार्थकता है, जिसकी प्रासंगिता आज के ग्लोवल वार्मिग के युग मे महत्वपूर्ण हो गयी है।

***संस्कृत विभाग**

**राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर**

## संदर्भ सूची

1. अथर्ववेद – 4.13.3
2. ऋग्वेद – 10.186.3
3. ऋग्वेद – 6.37.3
4. ऋग्वेद – 3.51.5
5. ऋग्वेद – 10.51.1
6. अथर्ववेद – 4.2.8
7. अथर्ववेद – 8.2.25
8. ऋग्वेद 10.90.6
9. यजुर्वेद 23.62
10. ऋग्वेद 1.164.51
11. छन्दोग्योपेनिषद 4.16।